आत्ममंथन

(समाज का दस वर्षीय लेखा-जोखा)

लेखक

सिद्धेश्वर,

एम॰ए॰,एस॰ए॰एस॰

प्रकाशक

सरदार पटेल साहित्य प्रकाशन

दिल्ली

आत्म मंथन

(समाज का दस वर्षीय लेखा जोखा)

लेखक	:	सिद्धेश्वर
कोपी राइट	:	लेखक
संस्करण	:	2004
सहयोग राशि	:	पाँच रुपये मात्र
प्रकाशक	:	सरदार पटेल साहित्य प्रकाशन, 'दृष्टि', यू॰ 207, शकरपुर विकास मार्ग, दिल्ली- 110092
दूरभाष	:	011-22059410, 22530652
Fax	:	Sidheshwar @ hot.mail. com
मद्रक	:	वैशाली प्रिंटर्स, श्री कृष्णपुरी, पटना-1
संपर्क सूत्र	:	संपादक विचार दृष्टि
		'बसेरा', पुरन्दरपुर, पटना- 800001
दूरभाष	:	0612 - 2228519

Atmmanthan by Sidheshwar

Price Rs.5.00

पुस्तिका के प्रसंग में

बिहार के कुर्मी समाज में 12 फरवरी 1994 ई० को पटना के गाँधी मैदान में एक अभूतपूर्व **बिहार राज्य कुर्मी चेतना महारैली** का आयोजन किया गया था जिसके द्वारा समाज और राज्य के विकास के लिए कुछ वादे किए गए थे और आम जनमानस को आंदोलन करने का निर्णय लिया गया था। महारैली के मंच से देश के नेताओं ने अपने-अपने ढंग से समाज और राज्य की प्रगति संबंधी बातें की थीं। भारत सरकार के रेल मंत्री श्री नीतीश कुमार ने कहा था कि चाहे कोई दिल्ली की गद्दी पर बैठा हो या पटना की गद्दी पर, इस कुर्मी समाज की उपेक्षा कर ज्यादा दिनों तक अपनी गद्दी को सुरक्षित नहीं रख सकता। उन्होंने लाखों की भीड़ को भरोसा दिलाया था कि इस समाज की उपेक्षा करके कोई राजनेता अब जिंदा ही नहीं रह सकता और उन्होंने कुर्मी समाज से यह संकल्प लेने की बात कही थी कि न तो किसी की उपेक्षा करेंगे और न उपेक्षित रहेंगे। इस समाज को उचित हिस्सा नहीं मिला है इसे स्वीकारते हुए श्री कुमार ने संविधान में संशोधन कर आरक्षण का दायरा पचास फिसदी से अधिक करने की वकालत की थी। इतना ही नहीं उन्होंने सामाजिक न्याय की ताकतों को गोलबंद कर उसका नेतृत्व प्रदान करने की बात भी की थी। किसान की दयनीय स्थिति के मद्देनजर किसानविरोधी सरकारी नीतियों का विरोध करने की जरूरत जताते हुए श्री कुमार ने पंचायतों में आरक्षण का लाभ उठाकर ग्रामीण राजनीति पर अपनी पकड़ बनाने पर भी बल दिया था।

पूर्व केंद्रीय मंत्री प्रो० सिद्धेश्वर प्रसाद ने बिहार के नवनिर्माण में कुर्मियों के योगदान की चर्चा करते हुए कहा था कि आजादी की लड़ाई से लेकर आज तक बिहार को बनाने का ही काम कुर्मी समाज ने किया। पूर्व सांसद वृषिण पटेल ने बिना दहेज के विवाह करने तथा जाति-उपजाति की सीमा को तोड़ने की बात पूरजोर शब्दों में की थी। महारैली के उद्घाटन कर्त्ता तथा पूर्व लोकसभाध्यक्ष रवि राय, सांसद शैलेन्द्र महतो, रामटहल चौधरी, रामपूजन पटेल, विनय कटियार, रामलखन वर्मा, विधायक मगनी लाल मंडल, लालचंद महतो, सदानन्द सिंह, उपेन्द्र प्र० वर्मा, भोला प्र० सिंह, मधु सिंह, श्याम सुन्दर सिंह, सुधीर महतो, विनोद कुमार राय, रामधनी सिंह तथा विश्व मोहन चौधरी सरीखे लगभग दो दर्जन से ज्यादा देश भर के नेताओं ने कुर्मी रेजिमेंट के गठन करने, समाज में व्याप्त कुरीतियों को दूर करने, कुर्मी समाज की अगुआई में दलित, पीड़ित, शोषित, पिछड़े तथा अन्य पिछड़े एवं अल्पसंख्यक समुदाय को साथ लेकर चलने से लेकर राजसत्ता पर कब्जा करने का आहवान किया गया था। अपने अध्यक्षीय भाषण में विधायक सतीश कुमार ने जातीय रैलियों को जातीय रैली से ही तोड़ने की बात के क्रम में कुर्मी जाति के विभिन्न

वर्गों को एक करने के साथ-साथ आपसी वैमनस्यता को खत्म करने और रैली के माध्यम से सामाजिक चेतना जाग्रत करने की बात की थी। महारैली के प्रमुख प्रवक्ता की हैसियत से मैंने भी उपस्थित सभी नेताओं, कार्यकर्ताओं आयोजकों तथा अपार जनशैलाव के प्रति उनकी शालीनता तथा अनुशासन प्रिय होकर रैली को अपेक्षा से अधिक और कल्पनातीत सफल बनाने के लिए तहेदिल से आभार प्रकट करते हुए यह संतोष व्यक्त किया था कि इस महारैली ने जनमानस को आंदोलित किया है और यह आशा व्यक्त की थी कि महारैली के बाद सामाजिक परिवर्तन की दिशा में निश्चित रूप से इस समाज के कदम आगे बढ़ेंगे तथा एक नया बिहार बनेगा।

महारैली के पटल से सत्ता में महत्वपूर्ण एवं प्रभावकारी भागीदारी के लिए सामाजिक न्याय में अपनी पुनः आस्था जताते हुए उसकी उपलब्धियों में प्रमुख भागेदारी, सामाजिक न्याय ट्रस्ट का निर्माण करने, घुलनशील जाति को कुर्मी जाति में शामिल करने, छोटानागपुर एवं संथालपरगना क्षेत्र के कुर्मी (महतो) को जनजाति घोषित कराने, दलित एवं शोषित वर्ग के साथ अटूट संबंध को और मजबूती प्रदान करने, कृषि को उद्योग का दर्जा दिलाने, कुर्मी रेजिमेंट की स्थापना कराने, महिलाओं को पूर्णरूप से शिक्षित करने और उन्हें राजनीति में समुचित हिस्सेदारी दिलाने, विधवा-विवाह को सामाजिक मान्यता प्रदान करने, छात्रों एवं युवकों को राजनीति के प्रति जागरूकता पैदा करने तथा उनके लिए अधिक से अधिक छात्रावासों की व्यवस्था करने और संविधान में संशोधन कर आरक्षण की सीमा पचास प्रतिशत से अधिक करने से संबंधित कुल 23 प्रस्तावों को पारित किया गया था। महारैली के बाद 8 एवं 9 मई 1994 ई. को पटना में **बिहार राज्य कुर्मी चेतना कंवेशन** तथा 11 सितम्बर 1994 को बिहार राज्य लवकुश कंवेशन का आयोजन कर जात से जमात बनाने की पुरजोर वकालत भी की गई थी।

इस महारैली को हुए आज दस साल बीत गए। इन प्रस्तावों का हश्र क्या हुआ और उसका कितना क्रियान्वयन हुआ यह किसी से छिपा नहीं । सत्ता और समाज परिवर्तन के सभी मनसूबे धरे- के -धरे रह गए। नेताओं के लंबे-चौड़े भाषण पानी के बुलबुले की तरह बिला गए और इस राज्य की स्थिति दिन- व -दिन बिगड़ती गयी। बिहार आज जिस स्थिति से गुजर रहा है वह पहले से अधिक भयावह है। सत्ता के प्रति जनता का असंतोष आज भी जारी है क्योंकि विकास की गति थम सी गयी है। विधि-व्यवस्था की धज्जी उड़ रही है जिसकी ओर पटना उच्च न्यायालय ने कई बार अपनी टिप्पणियाँ की हैं। आपने देखा नहीं अभी-अभी भारत के 55वें गणतंत्र दिवस समारोह के अवसर पर जब बिहार के राज्यपाल ने इस राज्य में कानून व्यवस्था पर चोट की तब राजनीतिक बवंडर खड़ा हो गया। भारत के राष्ट्रपति ने तो गणतंत्र दिवस के अवसर पर भ्रष्टाचार के फैलाव के लिए राजनीति को ही सबसे ज्यादा जिम्मेदार मानते

हुए सभी राजनीतिक दलों से उसे मिटाने के लिए अपने घोषणा पत्रों में शामिल करने का आह्वान किया। दुर्भाग्य से यहाँ प्रजातांत्रिक परंपराओं की मजबूती से ज्यादा कुर्सी की मजबूती को महत्व दिया जा रहा है। राजनीतिक परिदृश्य पर कलाबाज, भ्रष्टाचारी, क्षुद्र, स्वार्थी, अपराधी एवं निरंकुश नेता छाते जा रहे हैं, जो लोगों की आकांक्षाओं, लोकतांत्रिक संस्थाओं तथा पद की गरिमा और जिम्मेदारियों के प्रति घोर अवज्ञा दिखा रहे हैं। जे. पी. के संपूर्ण क्रांति के सपने को उनके चेलों ने चकनाचूर कर दिया। छात्र और युवा दिग्भ्रमित हैं। लोग एक दूसरे के खून के प्यासे हो गए हैं। हत्या, बलात्कार, अपहरण तथा रंगदारी की घटनाएँ रुकने का नाम ही नहीं ले पा रही है। मसलन समाज का सारा ढाँचा चरमरा रहा है। ऐसी विषम और भयावह परिस्थिति में महारैली और कंवेंशन के पटल से समाज और राज्य के विकास के लिए पारित प्रस्तावों के आलोक में अपने वादों को याद कर कुछ सोचने के लिए हम मजबूर हैं। सामाजिक अँधेरे से हाशिए पर पड़े समाज के सदस्यों को बाहर निकालने का प्रयास करना तो हमारा सामाजिक दायित्व भी बनता है। सामाजिक मुद्दों का खरा विश्लेषण तो समाज के सजग सदस्यों को करना ही होगा। आखिर कब तक आप मौन रहेंगे?

मौन की इसी स्थिति और चुप्पी को तोड़ने के लिए पिछले 20 जनवरी 2004 को बिहार के 26 जिलों से लगभग साढ़े तीन सौ सामाजिक कार्यकताओं द्वारा पटना के पिपुल्स कोओपरेटीव कॉलोनी में मेरी तथा मनेजर प्रसाद सिंह की अध्यक्षता में एक बैठक का आयोजन किया गया जिसकी पहल विधायक सतीश कुमार ने की। इस बैठक में एक सर्वसम्मत निर्णय लेकर 12 फरवरी 2004 को पटना में एक जानदार सामाजिक परिवर्तन जलसे का आयोजन करने का प्रस्ताव पारित किया गया। इस जलसे में शुद्ध रूप से बिहार के विभिन्न क्षेत्रों से सामाजिक कार्यकर्त्ताओं को आमंत्रित कर आत्ममंथन करने का निर्णय लिया गया। किसी भी समाज को बेहतर और स्वस्थ्य बनाने के लिए यह आवश्यक भी है कि एक अंतराल के बाद या समय-समय पर अपनी उपलब्धियों और कमजोरियों पर नजर दौड़ाते रहा जाए और आत्मविश्लेषण एवं आत्मनिरीक्षण कर पिछली गलतियों से सीख लेकर आगे बढ़ा जाए।

इस छोटी सी पुस्तिका **'आत्मंथन'** में बिहार राज्य कुर्मी चेतना महारैली की पृष्टभूमि, राजनीतिक एवं सामाजिक जवाबदेही सहित उन सभी बिन्दुओं पर मैंने प्रकाश डालने का प्रयास किया है जिसने इस समाज को आगे बढ़ने में रूकावटें पैदा की हैं। इसके साथ ही उन रूकावटों को दूर करते हुए कैसे उन पर विजय पाया जाए इस पर भी चर्चा की गयी है। दस्तक देते लोकसभा एवं विधानसभा चुनावों के मद्देनजर बिहार की समस्त जनता सहित कुर्मी समाज के मतदाताओं को अपने सही जनप्रतिनिधि के चयन में कौन सा रास्ता अपनाया जाए और उनकी अपेक्षाओं के अनुरूप हमारे कदम किस ओर बढ़ें कि

हम सफल हो सकें, इन मुद्दों पर विस्तार से हमने अपने विचार रखने की कोशिश की है। जरूरी नहीं कि हमारे सभी विचारों से समाज के सारे सदस्य सहमत हों, पर ऐसा भी नहीं कि हमारे कुछ विचार आपके मन से मेल न खाएँ। जिन बिन्दुओं पर हम सबों के मन मिले, उस रास्ते पर चलकर अपनी मंजिल की ओर बढ़ा जा सकता है।

कुछ इसी भाव से प्रेरित होकर **'आत्ममंथन'** पुस्तिका की रचना की गयी है। विश्वास है पुस्तिका में प्रस्तुत हमारे विचारों पर समाज के सजग प्रहरी मनन करेंगे ताकि उन्हें एक निश्चित दिशा तय करने में सहूलियत हो और तभी हमारी लेखनी की सार्थकता भी सिद्ध होगी।

दिनांक:- 12 फरवरी 2004

'बसेरा', पुरन्दरपुर, पटना-1

दूरभाष : 0612 - 2228519

सिद्धेश्वर

संपादक, **'विचार दृष्टि'**

आत्ममथन

महारैली से उपजी अपेक्षाएँ :

आज से ठीक दस वर्ष पूर्व सन् 1994 ई० के 12 फरवरी को पटना के ऐतिहासिक गाँधी मैदान में सामाजिक एवं राजनीतिक चेतना जाग्रत करने के ख्याल से **बिहार राज्य कुर्मी चेतना महारैली** का अविस्मरणीय आयोजन किया गया था जिसमें तन-मन-धन से कुर्मी समाज के प्राय: प्रत्येक सदस्य ने अपनी एकजुटता का परिचय देकर इसे अभूत पूर्व सफल बनाया। जहाँ तक इस महारैली में पूरे बिहार से शिरकत करने वालों की संख्या का सवाल है समस्त दूरसंचार माध्यमों सहित बी.बी.सी. ने कहा कि लगभग ग्यारह लाख लोग गाँधी मैदान में तथा लगभग इतनी ही संख्या में महारैली में आए लोगों की भीड़ पटना की विभिन्न सड़कों के चप्पे-चप्पे पर देखी गयी। मीडिया सहित बिहार के सभी तबकों के लोगों ने इस महारैली की मुक्त कंठ से सराहना इसलिए की कि यह अबतक हुई सभी अन्य रैलियों से भिन्न थी। मीडिया तथा पटना वासियों के हर जुबान से इसके अनुशासन प्रिय होने के समवेत स्वर सुनाई पड़े। कहा तो यहाँ तक गया कि पटना की विभिन्न सड़कों पर गरीब खोंचेवाले, ठेलेवाले का एक भी समान रैलीवालों ने न तो छूआ और न ही मुफ्त में एक भी चिनियाबादाम खाया। किसी प्रकार का कोई नुकसान किसी दुकानदार या पटना के आम नागरियों को नहीं महसूस हुआ जैसा कि आमतौर पर प्राय: अन्य सभी रैलियों में अबतक देखा गया। आखिर तभी तो समाचार पत्रों ने लिखा कि 'यदि पटना के नागरिकों को यह पता होता कि यह महारैली इतनी शालीन तथा अनुशासन प्रिय होगी तो सच मानिए यहाँ की जनता महारैली में आए लोगों पर फूलों की वर्षा करती।' मीडिया ने यह भी कहा कि महारैली की सफलता में बिहार की जनता को कुर्मी समाज से राज्य के नवनिर्माण की दिशा में अपार आपेक्षाएँ एवं आकांक्षाएँ जगी हैं। मीडियावालों ने यहाँ तक कह डाला कि चाहे-अनचाहे बिहार की तूफानी राजनीति में विकल्प के नेता और विपक्ष के नेता का दायित्व भी इसी समुदाय को संभालना होगा।

महारैली का उधेश्य:-

इस संदर्भ में एक बात और मैं स्पष्ट करना चाहूँगा कि इस स्वत: स्फूर्त गैर-सरकारी महारैली का उधेश्य अपनी एकता प्रदर्शित करने के साथ-साथ राज्य में एकल और चरम जातिवाद पर चोट करना भी था क्योंकि जातीयता ने बिहार के विकास को निश्चित रूप से अवरूद्ध किया है जिसका खामियाजा समाज के हर तबके को भुगतान पड़ रहा है। इसके अतिरिक्त महारैली के माध्यम से सत्ता पर काबिज हुकमरान को यह चेतावनी भी देनी थी कि सब तरह से सक्षम, सभ्य, सुसंकृत एवं शिक्षित

कुर्मी समाज सत्ता में हिस्सेदारी से महरूम न किया जाए अन्यथा उसके लोग राज्य की जर्जर एवं बदहाल स्थिति का मूकदर्शक नहीं बने रहेंगे। वे अपने वाजिब हक के लिए आंदोलन और संघर्ष पर उतरेंगे। आपको अच्छी तरह याद होगा कि महारैली करने के पीछे एक अलग राजनीतिक दल का गठन करना कतई उधेश्य नहीं था। यह दीगर बात है या इसे संयोग कहिए कि समता पार्टी नायक एक नए राजनीतिक दल का गठन हो गया और कुर्मी समाज के लोग उसके तले गोलबंद हो गए। सच तो यह है कि उस समता पार्टी की पहचान कुर्मी समाज के रूप में होने लगी जब कि उसके गठन में हर तबका शामिल था। हाँ कुर्मी समाज के एक सुलझे एवं विचारवान तथा जे॰ पी॰ आंदोलन की उपज एवं समाजवादी पृष्ठभूमि के श्री नीतीश कुमार के नेतृत्व में समाज के एक-एक सदस्य ने विश्वास किया जिसके चलते कुर्मी समाज ही समता पार्टी का एक मुख्य आधार आज तक बना हुआ है, किंतु सत्ता हासिल होने पर इसे हिस्सा मिलने की बात तो दूर, केंद्रीय तथा राज्य स्तर के संगठन में भी आज समुचित हिस्सेदार नहीं मिल पाई है। इस बात से इनकार नहीं किया जा सकता कि महारैली के सफल आयोजन और नीतीश जी के नेतृत्व में चलने वाली समता पार्टी को एकमुश्त समर्थन देने के कारण कुर्मी समाज की अपनी एक अलग राजनीतिक एवं सामाजिक पहचान बनी, किंतु यह भी उतना ही सच है कि नीतीश जी के कद में काफी इजाफा हुआ, यों, उनके कद बढ़ने में उनकी अपनी क्षमता, ईमानदारी, अपने दायित्व के प्रति निष्ठा और कर्तव्यपरायणता भी काम आई। जहाँ तक भूतल परिवहन, कृषि तथा रेल मंत्रि के रूप में उनकी उपलब्धियों का सवाल है बिहार की जनता ही नहीं पूरे देश की जनता उनका कायल है। बिहार में तो उनके प्रयास से खैर रेलों का जाल ही बिछ गया। इसके अतिरिक्त बाढ़ में थर्मल बिजली योजना तथा हरनौत में रेल कारखाना का श्रेय भी उन्हीं को जाता है, राजगीर में आयुद्य कारखाना के निर्माण में उनका बहुत बड़ा योगदान है। **राज्य की जर्जर स्थितिः**

महारैली के संदर्भ में एक और बात काबिलेगौर यह है कि आठ एवं नौ मई 1994 ई॰ को पटना के ब्रजकिशोर स्मारक भवन में एक भव्य एंव आकर्षक **बिहार राज्य कुर्मी चेतना कंवेंशन** तथा 11 सितंबर 1994 को श्रीकृष्ण स्मारक भवन में **बिहार राज्य लव-कुश कंवेंशन** का अयोजन किया गया जिसमें देशहित, राजहित और समाजहित के समवेत स्वर के साथ -साथ जात से जमात बनाने का संकल्प लिया गया। जहाँ तक मुझे याद है महारैली और कंवेंशन में पारित प्रस्तावों को अमली जामा पहनाने के लिए **बिहार राज्य कुर्मी चेतना मंच** का गठन भी हुआ था जिसका आज तक कोई अता-पता नहीं है। निःसंदेह इन दोनों आयोजनों ने जातिवाद के साथ-साथ सत्ता पर घनचोट की ताकि समाज में एक बदलाव आए। क्या समाज में कोई बदलाव आया? कुर्मी समाज के विकास की कोई रूप रेखा या दिशा तय हो पाई? बिहार की समस्त जनता की अपेक्षाओं एवं आकांक्षाओं की पूर्ति करने की दिशा में हमारे

कदम बढ़ पाए? राज्य एवं समाज के ज्वलंत मुद्दों को लेकर कोई आंदोलन चलाया गया? क्या सामाजिक कुरीतियों, विद्रूपताओं, अंध-विश्वास और पाखंड पर हम प्रहार कर पाए? इन सब सवालों का एक ही सीधा उत्तर है- नहीं। सच तो यह, है कि पक्ष-विपक्ष के नेता का दायित्व संभालने की बात तो दूर, राज्य के सत्ता शीर्ष की मिली कुर्सी भी हमसे खिसक गई। समाज को बदलने की उत्कंठा भी कुंठा में बदल गई और उसमें विकास की तुलना में ठहराव, नींद और जड़ता का आलम आ धमका। समाज के नौजवान सदस्यों और राजनीतिक कार्यकर्ताओं में आज उदासीनता एवं नैराश्य के भाव स्पष्ट रूप से उनके चेहरे पर पढ़े और देख जा सकते हैं। राज्य की बदहाली का नतीजा तो राज्य की समस्त जनता के साथ-साथ आप भी सबसे अधिक भुगत रहे हैं। ग्रामीण समाज में किसान मजदूर तबाह हैं और शहर की ओर मजबूरन पलायन कर रहें हैं। उनका कोई रैया-दुहैया नहीं, कोई रहनूमा नहीं। लाचारी और बेकारी ने उन्हें जहालत की जिंदगी जीने के लिए विवश कर दिया है। समाज का सारा ढाँचा आज चरमरता दिखाई दे रहा है। विशेषतौर पर कुर्मी समाज का ही सदस्य आज अपने को ठगा -सा महसूस कर रहा है, आखिर क्यों? क्या इन सारी समस्याओं के लिए हमारा राजनीतिक एवं सामाजिक नेतृत्व ही जिम्मेदार है या हम? इसका समुचित उत्तर आज इस समाज के सदस्यों का ढूँढ़ना है।

आत्मनिरीक्षण:

तो आइए, अब हम सब मिलकर इस पर विचार करें। आज वह समय आ गया है जब कुर्मी समाज को प्रत्येक सदस्य को अपनी समस्याओं पर गंभीरता और निश्पक्षता से आत्ममंथन करना है, आत्मनिरीक्षण करना है और यह सब पूर्वाग्रह से ऊपर उठकर करना है। कारण कि किसी भी स्वस्थ समाज और सबल राष्ट्र के निर्माण में सामाजिक एवं राजनीतिक चेतना आवश्यक है। सिर्फ विलाप करने, एक दूसरे को कोसने, पश्चाताप करने अथवा हाथ पर हाथ धरे बैठे रहने से किसी समस्या का समाधान कभी नहीं हो पाता। समाज अंततः वही आगे बढ़ता है जिसमें अपने अतीत का नीर क्षीर विवेक का स्वभाव हो और बूरे पहलुओं से संघर्षरत रहने की इच्छा शक्ति हो। अतएव आज आवश्यकता इस बात की है कि अतीत की गलतियों से पाठ लेते हुए अपने ठगे जाने की विवशता के सवाल पर हम समाज के बारे में सोचें, विचारें और खुद को संवारें। वैसे भी अगर समाज ने इतिहास बनाने का गर्व कई बार संजोया है तो उसे एक जिंदा समाज ही होना चाहिए और वह जिंदा समाज ही होता है जो संकटों से जूझता है, दबावों से टकराता है और लगातार परिवर्तन की तलाश करता है।

राजनीतिक नेतृत्व की जवाबदेही:

एक बात हमारी समझ में नहीं आती कि हम अपनी सभी समस्याओं के लिए राजनीतिक नेतृत्व को ही जिम्मेवार क्यों मानते हैं। क्या सामाजिक नेतृत्व अथवा समाज के सजग एवं प्रबुद्धजन,

साहित्यकार, पत्रकार, चिंतक एवं विचारक उसके लिए जवाबदेह नहीं है? यह बात ठीक है कि जिस राजनीतिक नेतृत्व पर हमने अपना पूरा विश्वास व्यक्त किया, कोल्हू के बैल की तरह आँख मूँदकर उसके इशारे पर हम चलते रहे, उसके हर आग्रह को आदेश मानकर हमने उसका अनुपालन किया और आज भी कर रहे हैं, किंतु नेतृत्व ने हमारे प्रति अपने दायित्व को नजरअंदाज किया। हमारी अपेक्षाओं और आकांक्षाओं के अनुरूप हमें दिशा प्रदान करने की बात तो दूर, हमारी रोजमर्रे से संबंधित व्यथा-कथा को धैर्यपूर्वक सुनने से भी इनकार करते रहे, आँख फेरते रहे। और तो और राजनीतिक नेतृत्व ने समाज के सजग एवं विचारवान सदस्यों से गुफ्तगूँ कर ज्वलंत मुद्दों पर विचार-विमर्श के लिए वक्त निकालना भी उन्होंने मुनासिब नहीं समझा। इसे विडंबना नहीं तो और क्या कहेंगे। दरअसल पिछले डेढ़ दो दशक से भारतीय राजनीति की गिरती साख से वे भी बेखबर रहे और अपने को उसी गिरोह में शामिल करना उन्होंने उचित समझा जबकि इस समाज की अपनी गरिमा और गौरवपूर्ण अतीत के अनुरूप उनसे अपेक्षाएँ भी उसी रूप में हम सबकर रहे थे क्योंकि वर्षों से हम लौह पुरुष सरदार वल्लभ भाई पटेल के अदम्य साहस, अप्रतिम व्यक्तित्व, अद्भुत सूझबूझ, सादाजीवन, उच्च आदर्श एवं विचार और उनके सद्आचरण से हम प्रेरणा प्राप्त करते रहें हैं। इसी प्रकार शिवाजी महाराज से दृढ़ता, कर्मठता, आत्मसम्मानी और कर्मयोगी होने की हमने सीख ली। चाटूकारिता को हमने कभी कबूल नहीं किया, आत्म-सम्मान से कभी समझौता करने का हमने नहीं सोचा क्योंकि कर्म ही हमारा आधार रहा और उसी रास्ते पर चलकर सत्ता की चुनौती स्वीकारते हुए भी आज तक हम अडिग हैं और सही रास्ते पर चल रहें हैं। यही नहीं हमने बुथ से लेकर बूचारखाने तक प्रहरी का काम किया, चुनाव में दिन को दिन और रात को रात नहीं समझा। हमें कई बार सलाखों के पीछे किया गया, जेल की हवा खानी पड़ी, सत्ता के जूल्म व सितम सहे, छोटी-बड़ी नौकरियों से भी महरूम रहे, हर कदम पर हमें ठुकराया गया, अपमान सहना पड़ा और बन्दूकों का हम अनेकों बार निशाना बने, हममें से कई लोगों को अपाहिज होना पड़ा और अनेकों को अपनी जान से हाथ भी धोना पड़ा। क्या यह सब हमने इसीलिए किया था कि निरंतर हम ठुकराए जाते रहें, हमारे हिस्से की रोटी भी पेटभरू को दी जाती रहे, किसी मोड़ पर भी हमारा कोई सहारा न रहा। हम इस लोहे के बने हैं कि इन सबों को भी सहने की शक्ति हममें है, किंतु हमारे लिए चिंता का विषय यह है कि हमारे सामने ही और लोगों को हर कदम पर तरजीह दी जा रही है, उनकी इज्जत की जा रही है, कम ही सही पर उन्हें कुछ न कुछ मिल रहा है और हमें सन्यासी और ब्रह्मचारी समझ लिया गया है। आखिर त्याग की भी तो कोई सीमा है, धैर्य और सहिष्णुता का भी तो कोई पड़ाव होगा। कबतक हम इंतजार में हाथ पर हाथ धरे बैठे रहेंगे? यह प्रश्न है हमारा उनके सामने जो हमारे रहनुमा हैं, कर्णधार हैं, हमारे भाग्य के विधाता हैं।

सामाजिक नेतृत्व की जवाबदेही:

अब तक हमने राजनीतिक नेतृत्व के समक्ष अपना दुखड़ा रोया, अब देखें अपने सामाजिक नेतृत्व को भी। जैसा कि पूर्व में हमने कहा कि महारैली और कंवेंशन के बाद उसमें पारित प्रस्तावों को मूर्तरूप देने के लिए बिहार राज्य कुर्मी चेतना मंच का गठन किया गया था। क्या यह सही नहीं कि यदि पारित प्रस्तावों को साकार करने और उसे जमीन पर उतारने का प्रयास इन दस वर्षों में किया जाता तो हमें यह दिन नहीं देखने पड़ते। यहाँ तक कि सशक्त संगठन से राजनीतिक नेतृत्व पर भी लगाम कसा जा सकता था, जो नहीं हो पाया। इसके अतिरिक्त बिहार में कुर्मी समाज के बिहार राज्य कुर्मी सभा, कुर्मी विकास परिषद, पटेल युवा परिषद और न जाने किस-किस नाम से कोई दर्जन भर सामाजिक संगठन हैं पर उनमें से कुछ तो सामाजिक नेतृत्व की पॉकेट संस्था बनकर रह गयी है। और यदि इन संगठनों से कुछ हो भी रहा है तो वह मात्र औपचारिकता का निर्वाह भर। क्या यह सही नहीं कि सामाजिक कुरीतियों, विद्रुपताएँ, विसंगतियों, पाखण्ड और अंधविश्वासों के चँगुल, में हम इतना फँस चुके हैं कि उससे उबरने का कोई उपाय भी नहीं दिखता। दहेज प्रथा की पराकाष्ठा, अंतरशाखा शादी-विवाह का न होना, अमीर-गरीब का भेदभाव, ऊँच-नीच का भेदभाव, पिछड़े-अति पिछड़े की बढ़ती खाई पर क्या प्रहार नहीं किया जाना चाहिए था? यह सामाजिक संगठन की नहीं तो और किसकी जवाबदेही कही जाएगी? क्यों नहीं संगठनकर्त्ता अपने दायित्व को समझ पा रहे हैं? इसकी तह में जाएँ तो एक गलती जो मेरी नजर में है उसकी चर्चा भी यहाँ कर देना लाजिमी है।

महारैली के आयोजकों से एक बड़ी भूल यह हुई थी कि विधायक सतीश कुमार स्वयं राजनेता हैं इसलिए महारैली के पटल पर जहाँ देश भर के नेताओं को सम्मान और अवसर दिया गया, वहाँ दूसरी ओर सामाजिक नेताओं को तनीक भी तरजीह नहीं दी गई जबकि महारैली को सफलता की मंजिल तक पहुँचाने में उनका ही योगदान था। आमतौर पर राजनीतिक नेतृत्व भी सामाजिक नेतृत्व और उसके कार्यकर्ताओं को किसी स्तर पर तरजीह नहीं देते। हाँ, चुनाव के वक्त भले ही उनकी आरती उतारी जाती रही हो पर चुनाव के बाद सामाजिक कार्यकर्त्ता नेताओं की नजर से दूर। संगठन को सशक्त, सार्थक और कारगार बनाने में भी नेताओं की कोई भूमिका नहीं रहती है और न ही उन्हें कोई अभिरूचि रहती है। उन्हें तो सिर्फ चुनाव के वक्त सामाजिक कार्यकर्त्ताओं के पीठ थपथपाने से ही काम चल जाता है। सच कहा जाए तो सामाजिक संगठनों के सशक्त और मजबूत होने से नेताओं को यह भय भी सताने लगता है कि कहीं उनकी अपनी पूछ भी न कम हो जाए। यही कारण है कि इधर हाल के वर्षों में केवल नेताओं की आरती उतारी जाती है और जूता सीने से लेकर चंडी पाठ तक का काम कराने के लिए समाज के सदस्य नेताओं की ही चाटूकारिता करने में अपना भला समझते हैं। सामाजिक संगठनों को कमजोर होते

जाने और उसके नेताओं की बेरूखी के संभवत: ये सब भी कारण हैं। इन सभी तथ्यों एवं विवशताओं के बावजूद यह कहा जा सकता है कि समाज की बीमारियों को दूर करने में न केवल कोताही की है बल्कि समाज के प्रति अपनी जावाबदेही का निर्वहन कर पाने में भी वे असमर्थ रहें हैं।

समाज के सजग सदस्यों की जवाबदेही:

मैं समाज के आप सभी सदस्यों से यह सवाल पूछना चाहता हूँ कि क्या सिर्फ राजनीतिक एवं सामाजिक नेता ही इन परिस्थितियों के लिए जिम्मेदार है ? नहीं, समाज के इस माहौल के लिए हम सब भी बराबर के जिम्मेदार हैं। हमें इस समस्या के मूल में जाकर विचार करना होगा क्योंकि राजनेता अथवा समाज के नेता हम सबों के द्वारा ही बनाए जाते है। किसी भी समाज की पहचान उसके सदस्यों से ही होती है। जिस समाज के व्यक्ति जितने कर्त्तव्यनिष्ठ, सदाचारी, ईमानदार और अच्छी राह के राही होंगे, वह समाज उतना ही तरक्की करेगा। आज हमारे समाज की जो स्थिति है, क्या हम ईमानदारी से यह कह सकते हैं कि समाज अपराध, और भ्रष्टाचार से मुक्त है? क्या हत्या, लूट, जालसाजी में हमारे सदस्यों का हाथ नहीं रहता? क्या हम अपने समाज के क्रांतिकारियों, शहीदों, देशभक्तों, जिन्होंने इस देश को आजादी दिलाई, को भूलते नहीं जा रहे हैं? और लोगों की तरह वांछित वस्तुओं को पाने के लिए अच्छा या बुरा कुछ भी कर गुजारने को तैयार नहीं हो रहें हैं? अपनी सभ्यता, संस्कृति और संस्कार को हमने भी भूलने का प्रयास किया है। हमारे समाज में भी दिखावे की संस्कृति जोर-शोर से पनप रही है। दहेज के दानव ने गरीब एवं मध्यम वर्ग के लोगों में कुहराम मचा रखा है। बेटी के बाप की नींद हराम है और एक दरवाजे से दूसरे दरवाजे की दौड़ में उनके जूते घिस रहे हैं। समाज के लगभग 70% नौजवान समाज से जुड़ी समस्याओं पर चिंतन नहीं करते। वे मौज मस्ती भरी दुनिया से ही खुश हैं क्योंकि सारे संस्कार पैसों पर ही जाकर समाप्त हो जाते हैं। संस्कारों की प्रथम पाठशाला हमारा परिवार और समाज ही है जहाँ का संस्कारित वातावरण हमें सुख, समृद्धि एवं शांति के मार्ग पर हमें ले जाता है। आज के आधुनिक युग में संस्कारवान परिवारों की कमी होती जा रही है, जिससे संबंधों की मर्यादा भी खतरे में पड़ती नजर आ रही है।

ऐसी विषय परिस्थिति में हम सबको यह सोचना होगा कि समाज को स्वस्थ बनाने तथा राष्टो को सबल बनाने के लिए हमने बच्चों को देश व समाज की संस्कृति, सभ्यता, चरित्र, त्याग, देशभक्ति आदि के बारे में कितनी जानकारी दी है? संस्कारहीन समाज से ही जंगल-राज की उत्पत्ति होती है।

इस परिप्रेक्ष्य में हम कब तक समाज के राजनेताओं और समाजिक संगठनों से जुड़े नेताओं को दोष देकर अपनी जिम्मेदारियों से बचते रहेंगे? उपदेश देना और आरोप लगाना बहुत आसान बात है। इसलिए किसी शायर ने कहा है:-

'जब किसी से कोई गिला रखना

सामने अपने आईना रखना।'

हमें क्या करना है?

अतएव समय का तकाजा है कि राजनेताओं एवं समाज सेवियों में व्याप्त बुराइयों एवं कमजोरियों को दूर करने के लिए समाज के सजग एवं प्रबुद्ध वर्ग को आगे आना ही होगा। हमें सदा यह याद रखना चाहिए कि अगर हम समाज की समस्या के समाधान का हिस्सा नहीं हैं तो हम ही समस्या हैं। सार्वजनिक जीवन से जुड़े नेताओं में यदि कमजोरी आई है तो उसे दूर करने के लिए समाज के सभी सदस्यों को भी सतर्क और चौकस होना होगा और समाज व राष्ट्र की मुख्यधारा में हम सबों को शामिल होना होगा। सामाजिक प्रतिबद्धता की प्रेरणा हमें अपने गौरवशाली अतीत से लेनी होगी। अपने कर्त्तव्य को समझना होगा। हमें अपने रास्ते स्वयं तय करने होंगे। जब हम रास्ते तय करने की बात करते हैं तो प्रश्न उठता है कि कौन सा रास्ता अख्तियार किया जाए, जिससे न केवल हमारे समाज का भला हो बल्कि गर्त में जा रहे हमारे राज्य के हित की बात भी उसमें निहित हो क्योंकि यहाँ की जनता इस समाज से बहुत बड़ी अपेक्षाएँ अपने मन में आज तक संजोए बैठी है। उनकी उम्मीदें आज भी जस की तस हैं। इस संदर्भ में यह भी कहना कदाचित अनुचित नहीं होगा कि जब हम सत्ता पर काबिज होने की बात करते हैं अथवा सत्ता में अपनी हिस्सेदारी जताने की बात उठती है तो यह प्रश्न उठता है कि क्या यह समाज बिना सभी को साथ लिए सत्ता पर काबिज हो सकता है? कतई नहीं। यदि ऐसा होता तो मुख्यमंत्री की मिली हुई कुर्सी हमसे खिसक नहीं जाती। इसलिए हमें इस बात पर भी ध्यान देना है कि समाज के दूसरे वर्गों का समर्थन भी हासिल हो।

समाज के अन्य वर्गों की मानसिकता:

इस प्रश्न पर जब विचार करते हैं तो हमें यहाँ बड़ी गंभीरता सो सोचना होगा कि आखिर बिहार की गद्दी पर पिछले एक-डेढ़ दशक से वर्तमान सरकार क्यों बैठी है? मेरी समझ से उसका एक मात्र कारण है कि वे यहाँ की शोषित, पीड़ित, दलित, पिछड़े, अति पिछड़े तथा अल्पसंख्यक समुदाय के प्रतीक से प्रतीत होते हैं। बेमन से ही सही, इस समुदाय के मन में यह बात घर कर गयी है कि वर्तमान सरकार ही हमारी रहनुमा हो सकती है क्योंकि आजादी बाद चार दशकों तक सत्ता पर बैठे हुकमरान की मार शोषित समाज ने सही है और सत्ता से दूर रहकर जो उसने भुगता है, उसे चाहकर भी वह भुला नहीं सकता। इसलिए बिहार की सत्ता पर आज फिर वही बैठें, इसकी कल्पना मात्र से उनके मन में पिछले चालीस साल की सारी स्मृतियाँ रेखांकित हो जाती हैं। फिर चार दशकों तक सत्ता का सुख भोगने वाले

लोगो की शोषितों के प्रति मानसिकता में भी तो कोई बदलाव नहीं नजर आता। इसी मानसिकता के चलते जब भी राज्य की सत्ता में परिवर्त्तन की बारी आती है या परिवर्त्तन की बात सोंची जाती है तो चालीस साल तक आजादी का फल चाभनेवाले लोग वर्तमान हुकमरान की जगह नितिश या उनके जैसे लोगों का नहीं, बल्कि उसी तरह के ही पुराधा का नाम उछलकर सामने आ जाता है। आपने देखा नहीं बिहार विधानसभा के पिछले आम चुनाव में भी वैसे ही लोगों का नाम उछाला गया और आगे आनेवाले विधानसभा के चुनाव में फिर उन्हीं में से एक को आगे रखकर चुनाव लड़ने की बात की जा रही है। कहने का तात्पर्य यह कि आज भी वे लोग अपनी पुरानी मानसिकता से ही ग्रस्त हैं। और जब तक वे इस मानसिकता से ग्रस्त रहेंगे वर्तमान सरकार की गद्दी लोगों के नहीं चाहते हुए भी सुरक्षित दिखती है मेरा मानना है कि वर्तमान सरकार को गद्दी से पदच्यूत करने का मात्र एक ही तरीका है कि उनका विकल्प तलाशा जाए और वह विकल्प के रूप में हाशिए पर पड़े समुदाय में से तलाशा जा सकता है। आज जो बिहार का माहौल है और राजनीतिक दलों के नेताओं की जो स्थिति है उसमें निःसंदेह नीतीश कुमार खरे उतरते हैं, चाहे लाख आप उनके बारे में कुछ कह लें। वे मुख्यमंत्री की कुर्सी पर काबिज इसलिए भी नहीं हो पा रहे हैं की वैसी मानसिकता के लोगों के गले वे आज भी उतरते नहीं दिखते हैं। कारण कि वे सोचते है कि कहीं एक बार नीतीश कुमार को मुख्यमंत्री की गद्दी मिल गई तो फिर उससे उतरने का तो सवाल ही नहीं। पिछली बार यदि वे उतर गए तो उसके भी मुख्य कारण वे ही लोग थे।

चुनाव में आप क्या करें:

इन सभी बातों का लब्बोलुआव यह कि दस्तक देते लोकसभा तथा विधानसभा के चुनाव में हमें उपर्युक्त तथ्यों पर अपना ध्यान केंद्रित कर ही मतदान का निर्णय करना है। हमारा हर संभव यह प्रयास हो कि अधिक से अधिक संख्या में विधायक वैसे लोग चुनकर आएँ, जो समाजवदी सोच और सुलझे एवं विचारवान लोग हों, हशिए पर पड़े लोगों के हिमायती हों उपेक्षित लोगो के रहनुमा हों, जिनमें सामाजिक प्रतिबद्धता हो, राष्ट्रीयता की भावना हो और जो सुख-दुःख के साथी हों। इसके लिए अभी से आपको अपनी मानसिकता बनानी है और कमर कसनी है। याद रहे किसी भी कीमत पर संपूर्ण समाज के बीच हमारे संबंध नहीं बिगड़ें। सामाजिक समरसता और सांप्रदायिक सद्भाव का हम हमेशा ख्याल रखें क्योंकि आपके विरोधी सत्ता की कुर्सी हथियाने के लिए कुछ भी कर सकते हैं। इसलिए समय की माँग है कि हम सदैव सतर्क और चौकस रहें, मतदान में हम एक-एक का सरीक हो और भाईचारा को हम कभी न भूलें।

चुनाव में कैसे और किनसे चौकस करे?

चुनाव के दौरान तथा मतदान के वक्त एक और बात का ख्याल आपको रखना है जो

सबसे महत्वपूर्ण है। जनप्रतिनिधि के चयन में जाति, धर्म, संप्रदाय, भाषा तथा क्षेत्र का सहारा आप कदापि न लें। आप यह न भूलें कि जिस उम्मीदवार को आप अपना समझकर या अपनी जाति या धर्म का मानकर उनके पक्ष में अपना मत देने जा रहें हैं और, दूसरी जाति या धर्म का समझकर जिसे पराजित करने की सोच रहे हैं, उन सभी उम्मीदवारों की अपनी एक अलग जाति है। जिस प्रकार अपराधियों, समाज-विरोध ी तत्वों देशद्रोही शक्तियों एवं आतंकवादियों की अपनी एक जाति होती, है उसी प्रकार विभिन्न राजनीतिक दलों के इन नेताओं की भी अपनी एक अलग जाति होती है। चुनाव के दौरान ही वे केवल एक दूसरे से जाति व धर्म के नाम पर अलग दिखेंगे और आपको उसी नाम पर बाँटने का काम करेंगे, आपको एक दूसरे लड़ाऐंगे। इस बात को गाँठ बाँधकर आप चौकस रहिए कि किसी भी कीमत पर आपस में लड़ें नहीं और सामाजिक सदभाव का वातावरण बिगड़े नहीं क्योंकि चुनाव के वक्त जो नेता एक दूसरे के प्रबल विरोधी होते हैं और यहाँ तक कि एक दूसरे के जान-लेवा बने दिखते हैं वे वस्तुत: चुनाव के बाद किसी भी क्षण एक हो जाते हैं, उनके सिद्धांत अपनी पार्टी के वसूल सभी हवा हो जाते हैं। आपने देखा नहीं चुनाव की आहट और शंखनाद होने के तुरन्त बाद प्राय: सभी राजनीतिक पार्टियों ने किस तरह अपने-अपने सिद्धांतों, और अपनी पार्टी की नीतियों को तिलांजलि देकर आपस में गठबंधन करने को बेताब हो गए। नेताओं के वक्तव्य को पढ़िए, सुबह कुछ और शाम होते-होते कुछ और। किसी भी क्षण वे अपने सिद्धांतों से समझौता कर लेते हैं और वह भी केवल कुर्सी हथियाने के लिए, सत्ता पर काबिज होने के लिए। जिन नेताओं को आप एक दूसरे के विरोधी देख रहे हैं और वक्तव्य में दोनों को दो छोर पर खड़े देख रहे हैं दरअसल गोटी फिट हो जाने पर दूसरे दिन अहले सुबह दोनों के वक्तव्य अखबारों में यह पढ़ने को मिलेगा- 'उनके आपस के भ्रम दूर हो गए हैं और फलाँ नेता की घर वापसी हो गयी है'। इसके ठीक विपरीत एक ही मुहल्ले अथवा एक ही गाँव के जो लोग चुनाव के वक्त झगड़ा कर बैठते है, वे हमेशा के लिए एक दूसरे के जान-लेवा बन जाते हैं। और जो लोग ऐसा करते हैं उन्हें न तो किसी नेता का सहारा मिलता है और न ही किसी तरह का आर्थिक सहयोग। भले ही वे नेताओं की दर-दर क्यों न भटकते रहें। नेताओं के इन्हीं कारनामों के मद्देनजर एक कार्टूनिस्ट ने एकार्टून बनाते हुए लिखा-

'राजनेताओं की आत्मा अलग किस्म की होती है बेटा,

वह नया चोला त्याग कर पुराना चोला भी धारण कर सकती है।'

इसलिए मतदाताओं को नेताओं के भुलावे और वादे में कभी नहीं आना चाहिए क्योंकि वे कब अपना चोला बदल देंगे, कोई ठिकाना नहीं। सिद्धांत सुविधा की राजनीति कर रहे नेताओं के लिए पलटी मारना आम बात हो गयी है। अपने लाभ के लिए हर दल दलदल में धँसता जा रहा है। खुलेआम एक दूसरे को गाली देनेवालों को गले मिलते देखकर क्षुब्ध होना अब अर्थहीन है। अतएव चुनावा में जीत

के लिए जाति, धर्म, धन और बाहुबल उनके चार मानदंड बन गए हैं। हमें इससे सावधान रहना है और इन मानदण्डों को नजरअंदाज कर स्वच्छ छवि एवं विचारवान जनप्रतिनिधि का चुनाव करना है तभी हम अपना हित, राजहित और देशहित की कल्पना कर सकते हैं और यही समय का तकाजा भी है। इतिहास गवाह है कि स्वस्थ समाज का निर्माण तभी हो सकता है जब यहाँ की जनता चौकस और सतर्क हो। आज सारा परिदृश्य वही है। नारे बदल दिए गए हैं पर चेहरे वही हैं। जाहिर है जनता भी वही है। चुनावी परिदृश्य में आम आदमी के मुद्दे गौण हो गए हैं। बुनियादी समस्याओं से मतदाता सहित नेता भी परिचित हैं, लेकिन जाति का तिलिस्म पैदा कर भ्रम का आवरण लिपटाया जा रहा है ताकि चुनाव के बाद भी मुद्दे गौण रहें। दरअसल जनता की सेवाओं के नाम पर प्रतिनिधित्व का मुखौटा पहने ये सियासी दल अपने स्वामी के हाथ में नाचने वाले बंदरो की टीम है। चुनाव इसका भौंडा नाटक है जिससे हम और आप गुजर रहे हैं और सियासी कुनबा सह भी जनता, मात भी जनता का खेल-खेल रहा है। इसलिए हमें जाति, मजहब तथा क्षेत्रवाद से सावधान रहना है और अपराधियों की बुलेट का जवाब बैलेट से देना है क्योंकि लोकतंत्र में चुनाव एक पावन महापर्व है।

राजनीतिक दलों पर चुनाव में बेहतर उम्मीदवार खरे करने के लिए दबाव बनाना चाहिए। कल हमारा है और हम उस कल के लिए आज को सुधारें तो मंजिल पर पहुँचना मुश्किल नहीं, यही हमारा विश्वास है। निश्चित रूप से सामाजिक संगठनों को अपने विचार बदलने होंगे और उन्हें ठीक से काम करने होंगे। यदि हमारी मानसिकता और विचार अच्छें होंगे तो हमें सहयोग के लिए तमाम लोग भागीदारी हो जाएँगे। विचार ही हमारे कर्मों की आधारशिला है। मानसिकता का सीधा प्रभाव हमारे विचारों पर पड़ता है। ये दोनों एक दूसरे के पूरक हैं। इसलिए हम अपनी मासिकता को कुत्सित न होने दें क्योंकि उससे हमारे विचार प्रभावित होंगे। सकारात्मक विचारों का विराट स्वरूप यदि हम सबों ने अपने में एकत्र कर लिया तो हम अपने साथ समाज के अन्य लोगों को भी ले चलने में सफल होंगें और टकराव से बचेंगे। यदि टकराव की स्थिति उत्पन्न होती है तो वह हम सबकी प्रगति में बाधक होगी, इसका ख्याल हमें अवश्य रखना है। राह कठिन है पर मंजिल दूर नहीं। आवश्यंकता केवल दूरदृष्टि की है। हमें अपने मूलभूत एकता पर आज भी पक्का यकीन है। हमारा विश्वास है कि हमारी राजनीति जबतक जमीन पर रहेगी, समाज के करोड़ों सदस्यों के दिल और जबान पर रहेगी, फलेगी-फूलेगी, जिस दिन वह पेड़ पर घोसला बनाकर अभिजात्य और कुलीन होने का प्रयास करेंगी, रसातल चली जाएगी। अतएव समाज को चौकस होना होगा।